उपसंहार

नागार्जुन का सारस्वत व्यक्तित्व बहुआयामी है । काव्य रचना और उपन्यास लेखन में उनकी प्रतिभा विशेष रूप से प्रस्फुटित हुई है । वे प्रगतिशील चेतना से संपृक्त साहित्यकार हैं । उनकी प्रगतिशील चेतना तथा सामाजिक प्रतिबद्धता उनके औपन्यासिक साहित्य में भी दृष्टिगत होती है । उनका उपन्यास साहित्य सामाजिक यथार्थवाद की स्थापना करता है । सामाजिक समस्याओं के निरूपण में उनकी दृष्टि सामाजिक तथा तीव्र होती हैं । डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में -"समाजवादी उपन्यासों में एक निर्दिष्ट दृष्टि होती है । वह दृष्टि लेखक की निजी दृष्टि नहीं हो सकती, वह मार्क्सवादी होती है, अर्थात् मार्क्स ने सामाजिक यथार्थ का जो विश्लेषण किया है, उसे ये उपन्यास छोड नहीं सकते ।"[1] शोषित जनता की पीडा और वर्ग संघर्ष उनकी रचनाओं में उभरकर आये हैं । वे भारत के शोषित, पीडित एवं अभावग्रस्त किसानों के यथार्थ उपन्यासकार हैं ।

नागार्जुन ने राजनीतिक चेतना और सामाजिक प्रतिबद्धता का परिचय देते हुए अपने उपन्यासों की रचना की है । उन रचनाओं में उनका श्रेष्ठ व्यंग्यकार का रूप भी प्रकट हुआ है । उनका व्यंग्य इतना यथार्थ, स्पष्ट और शक्तिशाली है कि पाठक उस से अप्रभावित नहीं रह सकता । इस प्रकार वे हिन्दी के श्रेष्ठ औपन्यासिक व्यंग्यकार के रूप में भी प्रतिष्ठित है ।

---

1. डा. रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास:एक अंतर्यात्रा - पृ. 112

सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति नागार्जुन के उपन्यासों की विशिष्ट पहचान है । सामान्य जन के जीवन का यथार्थ दुखद अनुभवों से भरा हुआ है । इसलिए सामान्य जनता के जीवन का यथार्थ चित्रण में निराशापूर्ण चित्रों की अभिव्यक्ति होना स्वाभाविक है । किन्तु नागार्जुन की समूची औपन्यासिक रचनाओं में उभरता स्वर निराशा का नहीं, आशा का है ; अनास्था का नहीं, आस्था का है । अर्थात् नागार्जुन मार्क्सवादी विचारधारा के साहित्यकार हैं, अतएव उनमें निराशा के बदले आशा और आस्था का होना स्वाभाविक हैं ।

सामाजिक यथार्थ के अंकन के साथ नागार्जुन ने अपने युग की राजनीतिक स्थितियों की ओर भी इशारा किया है । उनके उपन्यास नागार्जुन की राजनीतिक सोच को भी उजागर करती है । मार्क्सवाद से प्रभावित प्रतिबद्ध लेखक होने के कारण उनकी औपन्यासिक कृतियों में मार्क्सवादी राजनीतिक चेतना प्रसंगानुसार प्रकट होती है ।

नागार्जुन ने अपने औपन्यासिक कृतियों में दिखाया है कि शिक्षित नवयुवकों से ग्रामीण समाज की पुरानी मान्यतायें एवं जर्जर श्रृंखलाएँ टूट रही हैं । उनका दृढ़ विश्वास है कि जब तक नेतागण आडम्बरी रहेंगे तब तक देश-सेवा का स्वप्न पूर्ण नहीं होगा । आज का हमारा राष्ट्र भ्रष्ट नेतृत्व से त्रस्त है । नेताओं का लक्ष्य इसप्रकार

हो गया है कि किसी न किसी प्रकार चुनाव जीतना और जन सेवा की आड में अपनी तिजोरी भरना ।

नागार्जुन के उपन्यास आंचलिक और यथार्थवादी उपन्यासों के मध्य में पडते हैं । उनकी कथा एक अंचल से लेकर प्रस्फुटित होती है इसलिए आंचलिक कहा जा सकता है । समाजवादी उपन्यास और आंचलिक उपन्यासों में कोई विरोध तो नहीं है । आंचलिक उपन्यासों का स्वर समाजवादी और सामाजिक दोनों हैं । लेकिन उनकी बनावट और बुनावट में फरक होता है । उसमें आंचलिकता, केवल परिवेश या भाषा के पुट के रूप में नहीं आती । लेकिन एक विशिष्ट भूभाग की सारी संश्लिष्ट ज़िन्दगी की अभिव्यक्ति के रूप में आती है ।

नागार्जुन के उपन्यासों की कथा अंचल की नहीं होती है, अंचल से ली गयी होती है । वे अंचल के संश्लिष्ट जीवन की कथा बखाने के स्थान पर अंचल से लिये गये किसी पात्र की कहानी कहते हैं । यह कहानी वर्णनात्मक होती हैं और सीधी सादी सरल रेखा में चलती है । अंचल केवल परिवेश के रूप में प्रकट होता है - प्रकृति के परिवेश, भाषा के परिवेश, स्थानीय रीतिरिवाज़ों का परिवेश आदि के रूप में विद्यमान होते हैं । इस परिवेश से नायक अपनी कहानी कहता हुआ दिखाई पडता है । नागार्जुन के उपन्यासों में आंचलिक उपन्यास की संश्लिष्टता प्राप्त नहीं कर पाते । फिर भी उनके उपन्यासों में अभिव्यक्त प्रसंगों में आंचलिक परिवेश की झलक मिलती है ।

नागार्जुन प्रगतिशील साहित्यकार हैं । लेकिन उनके कथानकों के विन्यास में परंपरा का मोह प्रकट है और कथानक का चयन प्रगतिशील विचारधारा के अनुसार साधारण जन जीवन से किया गया है । वे साधारण जनता के आर्थिक पराधीनता, पीडा, अभाव, अपमान, संघर्ष आदि को यथार्थवादी दृष्टि से चित्रित करते हैं । उपन्यासकार नागार्जुन पुराने संबंधों, मूल्यों और स्थितियों की विभीषिका को चित्रित करते हुए नये प्रतिमानों की ओर संकेत करते हैं । उपन्यासकार के रूप में उनकी विशेषता उनकी मार्क्सवादी विचारधारा नहीं है अथवा आरोपित रूप में नहीं लगती है । अपने उपन्यासों में नागार्जुन भविष्य की संभावनाओं को वर्तमान में जीवित कर देते हैं । नागार्जुन के बारे में डा. मधुरेश का यह कथन विचारणीय है - "प्रगतिशील हिन्दी कथा साहित्य को टुच्चा और बेईमान समझनेवाले डा. रामविलास शर्मा भी नागार्जुन को हिन्दी का यशस्वी उपन्यासकार मानकर अपनी पुस्तक "भारतेन्दु हरिश्चंद्र" उन्हें समर्पित करते हैं, भले ही किन्हीं कारणों से वह उन पर कुछ न लिख सके हों ।"[1]

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में आधुनिक नारी की समस्याओं पर भी दृष्टिपात किया है । आधुनिक नारी का जीवन तनावपूर्ण है । उसे बाहरी एवं भीतरी तनावों से गुज़रना पडता हैं । पर शोषण का शिकार होना उसकी नियति है । आज की शिक्षित नारी अपने पूरे व्यक्तित्व की खोज के लिए आतुर है । वह अलंघ्य दीवारों को पार करने का साहस करती है । उसका व्यक्तित्व क्यों

---

1. आलोचना (त्रैमासिक) जुलाई-सितंबर 1972 - पृ. 50

फौलादी स्थिति में आते आते मोम बनकर द्रवित हो जाता है ? क्यों समर्पण की अवस्था उसकी नियति बन जाती है ? क्यों उसकी उन्नति के मार्ग में अचानक बीच में ही पूर्ण विराम बन जाता है ? ये तमाम प्रश्न नागार्जुन के उपन्यासों में उठाये गये हैं ।

बीसवीं सदी के हिन्दी के प्रतिष्ठित साहित्यकारों में नागार्जुन का स्थान शीर्षस्थ हैं । बहुमुखी प्रतिभा के रचनाकार नागार्जुन का कवि रूप ही अधिकतर चर्चा में आया है । उनके उपन्यासों का अध्ययन करने पर प्रतीत होता है कि उपन्यासकार के रूप में भी वे कम महत्वपूर्ण नहीं है । सामाजिक यथार्थवादी उपन्यासों की परंपरा में उनका औपन्यासिक साहित्य एक महत्वपूर्ण कडी है । साथ ही साथ आंचलिक उपन्यासकारों के महत्वपूर्ण कई तत्व उनके उपन्यासों में लक्षित होते हैं । अतएव हिन्दी के आंचलिक उपन्यासकारों की चर्चा के प्रसंग में भी नागार्जुन का नामोल्लेख करना अनिवार्य हो जाता है । उनके उपन्यासों में शैल्पिक नयापन नहीं है, लेकिन उनकी औपन्यासिक रचनाओं में अपने समय के सामाजिक जीवन की ऊष्मा महसूस होती है । वे समय के सत्य के साक्षी हैं ।